ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 170-171**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

शिवपूजन सहाय की कहानियों का कथ्यगत अनुशीलन

डॉ0 अखिलेश कुमार
सहायक प्राचार्य, हिन्दी विभाग, डॉ0 एल0 के0 वी0 डी0 कॉलेज, ताजपुर, समस्तीपुर (ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा) (बिहार) भारत

Received-13.05.2025, Revised-20.05.2025, Accepted-27.05.2025 **E-mail : a.k.akela10@gmail.com**

सारांशः ***कहानी के क्षेत्र में 'शिवपूजन सहाय' एक अपरिहार्य हस्ताक्षर थे। वे अपनी रचनाओं में आदर्श, शील और सद्भाव को अधिक महत्व दिया है। शिवपूजन सहाय एक समर्थ पत्रकार भी थे। ये 1924 में लखनऊ में प्रेमचन्द के साथ माधुरी का सम्पादन किया। 1934–39 ईँ तक पुस्तक भण्डार लहेरिया सराय में सम्पादन कार्य किया। 1939–49 तक राजेन्द्र कॉलेज छपरा में प्राध्यापक रहें। 1950 ई0–59 ई0 तक पटना में बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् के निदेशक रहे। तत्पश्चात् पटना में हिन्दी के प्रसिद्ध कहानीकार उपन्यासकार, निबंधकार के रूप में ख्याति प्राप्त हुई। उन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में 1960 ईँ में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।***

'शिवपूजन सहाय' प्रेमचन्द युगीन सहज एवं सुलझे कहानीकार हैं, इनके कहानियों में समाज, परिवार, बच्चे ग्रामीण परिवेश का समावेश हुआ है। इनके कहानियों में भारतीय संस्कृति की अमिट छाप परिलक्षित हुआ है, इनके कहानियों का विषय सीधा और प्रत्यक्ष है। 'शिवपूजन सहाय' की कहानियों की कथ्य की विशेषता अपने समकालीन से जोड़ती है। इनके कहानियों में समर्पण मुण्डमाल, सतीत्व की उज्ज्वल प्रभा, विष–पान कहानी का पलॉट आदि है।

कुंजीभूत शब्द– कथ्यगत अनुशीलन, अपरिहार्य हस्ताक्षर, परिवेश, समावेश, भारतीय संस्कृति, समर्पण मुण्डमाल।

शिवपूजन सहाय के कथा साहित्य में एक कहानी समर्पण नाम से प्रसिद्ध है, जो अपने–आप में ऐतिहासिकता से परिपूर्ण है। कहानीकार ने उदयपुर के महाराणा राजसिंह के समर्थ सरदार चूड़ावतजी आज औरंगजेब का दर्पदलन करने और उसके अन्धाधुंध अंधेर का उचित उत्तर देने जाने वाले हैं। कहानीकार ने चूड़वत की पत्नी के प्रेम पूर्णतः समर्पित दर्शाया है। चूड़ावतजी युद्ध–भूमि में जाने से पहले अपनी नई–नवेली पत्नी से मिलने जाते हैं और बार–बार अनायास ही मुड़–मुड़कर पत्नी के सुन्दर मुख को निहारते जाते हैं। हाड़ा वंश की सुलक्षणा, सुशील और सुन्दरी सुकुमारी से ब्याह हुए दो–चार दिन से अधिक नहीं हुआ होगा। अभी सुहाग का सिन्दूर दुहराया भी नहीं गया है। इन पति–पत्नी के प्रेम को इन पंक्तियों में दर्शाया गया है– 'चूड़ावतजी हाथ में लगाम लिये ही बादल के जाल से निकले हुए उस पूर्णचन्द्र पर टकटकी लगाये खड़े हैं। जालीदार खिड़की से छन–छनकर आनेवाली चॉद की चटकीली चॉदनी ने चूड़ावत–चकोर को आपे से बाहर कर दिया है। हाथ की लगाम हाथ ही में है, मन की लगाम खिड़की में है। नये प्रेम–पाश का प्रबल बन्धन प्रतिज्ञा–पालन का पुराना बन्धन ढीला कर रहा है। चूड़ावतजी का चित चंचल हो चला है। वे चट–पट चन्द्रभवन की ओर चल पड़े। वे यद्यपि चिन्ता में चूर है पर चन्द्र–दर्शन की चोखी चाट लग रही है। वे संगमरमरी सीढ़ियों के सहारे––––।

हृदय–हारिणी हारा–रानी भी, हिम्मत की हद करके हल्की आवाज से बोली– ''प्राणनाथ। मन मलिन क्यों है? मुखारविन्द मुर्झाया क्यों है? न तन में तेज ही देखती हूँ, न शरीर में शांति ही। ऐसा क्यों? भला उत्साह की जगह उद्वेग का क्या काम है। उमंग में उदासीनता––––। वीरों के हुँकार से कायरों के कलेजे भी कड़े हो रहे हैं। भला ऐसे अवसर पर आपका चेहरा क्यों उतरा हुआ है। लड़ाई की ललकार––––––। प्राणनाथ! शूरों को शिथिलता नहीं शोभती। क्षत्रिय का छोटा–मोटा छोकड़ा भी––––––––। हम सत्य की रक्षा के लिए पुर्जे–पुर्जे कट जायेंगे प्राणेश्वरी। किन्तु हमको केवल तुम्हारी ही चिंता बेहद सता रही है। अभी चार ही दिन––––––।''

यदि नवविवाहिता उर्मिला देवी वीर–शिरोमणि लक्ष्मण को सांसारिक सुखोपयोग के लिए कर्तव्य पालन से विमुख कर दिये होती, तो क्या कभी लखनलाल को अक्षय–यश लूटने का अवसर मिलता? वीर–बघूटी उत्तरादेवी यदि अभिमन्यू को––––।

चूड़ावतजी का चित हाड़ा–रानी के हृदय रूपी हीरे को परखकर पुलकित हो उठा। प्रफुल्लित मन से चूड़ावतजी ने रानी को बार–बार गले से लगाया।[1]

चूड़ावत जी मात्र (18) अट्ठारह वर्ष के हैं और इस उम्र में पति–पत्नी को एक–दूसरे के प्रति समर्पण का भाव स्वभाविक माना जाता है। चूड़ावत जी लड़ाई के मैदान में निकल चुके हैं। उधर रानी विचार कर रही है द्रष्टव्य है– ''मेरे प्राणेश्वर का मन मुझमें में ही यदि लगा रहेगा तो विजय– लक्ष्मी किसी प्रकार उनके गले में जयमाल नही डालेगी। उन्हें मेरे सतीत्व पर संकट आने का भय है। कुछ अंशो में यह स्वभाविक भी है।''

इसी विचार–तरंग में रानी डूबती–उतरती है। तबतक चुड़ावतजी का अंतिम संवाद लेकर आया हुआ एक प्रिय सेवक विनम्र भाव से कह उठता है– ''चूड़ावत जी चिन्ह चाहते हैं– दृढ़ आशा और अटल विश्वास का। संतोष होने योग्य कोई अपनी प्यारी वस्तु दीजिए। उन्होंने काहा है– तुम्हारी ही आत्मा हमारे शरीर में बैठकर इसे रणभूमि की ओर लिए जा रही हैः हम अपनी आत्मा तुम्हारे शरीर में छोड़कर जा रहें है।''

स्नेह–सूचक संवाद सुनकर रानी अपने मन में विचार रही है– प्राणेश्वर का ध्यान जबतक इस तुच्छ शरीर की ओर लगा रहेगा, तबतक निश्चय ही वे कृतकार्य नहीं होगे। इतना सोचकर बोली– ''अच्छा, खड़ा रह, मेरा सिर लिये जा।''

जबतक सेवक हॉ! हॉ! कहकर चिल्ला उठता है, तबतक दाहिने हाथ में नंगी तलवार और बायें हाथ में लच्छेदार केशोंवाला मुण्ड लिए हुए रानी का धड़, विलास मंदिर के संगमरमरी फर्श को सती रक्त से सींचकर पवित्र करता हुआ धड़ाम से धरती पर गिर पड़ा।

बेचारे भय–चकित सेवक ने यह दृढ़ और अटल विश्वास का चिन्ह कॉपते हुए हाथों से ले जाकर चूड़ावतजी को दे दिया। चूड़ावतजी प्रेम से पागल हो उठे। वे अपूर्व आनन्द मे मस्त होकर––––।[2]

इस कहानी के द्वारा कहानीकार ने यह दर्शाया है कि भारत की नाड़ियॉ अपने पति के प्रति पूर्णतः समर्पित होती है। समय आने पर अपने प्राणों को अपने पति के लिए न्योछावर भी कर देती है।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

कथाकार की अगली कथा है सतीत्व की उज्ज्वल प्रभा। यह कहानी रूपनगर की राजकुमारी राठौर–वंश की कन्या के सतीत्व से जुड़ी है। राजकुमारी, रूपवती, सुन्दरता के साँचे ढली हुई सोने की सजीव सलोनी मूर्ति होने के कारण 'प्रभावती' नाम से प्रसिद्ध थी। द्रष्टव्य है– ''बाल–सूर्य की मीठी और ठंढ़ी किरणों की भाँति उसके नख–शिख–सुन्दर शरीर से तेज की स्निग्ध छटा–छिटकती रहती थी। वह दूध और कपूर–सी उजली चाँदनी के अमृतरस में पगी हुई कुमुदनी–सी विकसित और भगवद्भक्ति के गाढ़े रंग में रंगी हुई कविता–सी सरल थी। वह अनन्यरूपा राजकन्या स्वतंत्रता–देवी की अनन्योपासक की प्रत्यक्ष मूर्ति सी मालूम होती थी। जान पड़ता था, मानो राठौर की गिरि दशा में भी उनका गौरव बढ़ाने के लिए साक्षात् वीरता देवी ने सौम्य रूप धारण करके अवतार लिया है। जहाँ वह रहती थी, वहाँ किसी दूसरे पुरुष अथवा कुल्टा स्त्रियों की छाया तक नहीं जाने पाती थी। राजपूतों की कुलीन कन्याएँ आ–आकर उससे 'गीता' का उपदेश सुना करती थी।''[3]

राजकुमारी प्रभावती की वाणी गंगा की स्वच्छ धारा के समान पवित्र और बच्चो की मधुर हँसी के समान सरल थी। कड़वी वाणी तो सपने में भी न हुई हो। झूठ बोलने और बेकार बकवास करने से वह मौन रहना ही अच्छा समझती थी। द्रष्टव्य है– ''वह जो कुछ बोलती थी, सबमें सत्यता के साथ–साथ सरसता भरी रहती थी। वह कोमल वचनों से भगवान का गुण गाकर अपनी प्यारी सखी सहेलियों को सुनाती रहती थी। प्रस्फुटित कमल कलिका–सी युवावस्था भी उसके दिल में विवाह की लालसा पैदा नहीं कर सकी थी। चमेली और गुलाब को मात करने वाली सुकुमारता भी उसे भोग–विलास की ओर नहीं झुका सकी थी। राजसी सुखों के साधनों से घिरी रहने पर भी वह संसार की कुवासनाओं से बिल्कुल अलग रहा करती थी; जैसे जलल में रहने पर भी कमलिनी जल से जुदा रहती है।''[4]

प्रतिदिन सुबह जल्दी उठती और सबसे पहले भारत की सती साध्वी अर्थमहिलाओं के शुभ नाम याद किया करती थी। फिर मन–ही–मन भगवान से प्रार्थना करती, जो इन पंक्तियों द्वारा द्रष्टव्य है– ''हे परमपिता! तूने ऐसे कूल में मेरा जन्म दिया है, जिसकी कन्याएँ प्राण देकर भी अपना पत–पानी बचाती है। जिस समय भारत की सती पुत्रियों का पद–पद पर व्रतभंग किया जा रहा है, जिस जमाने में उनके सिर पर सदा सैकड़ों संकट सवार रहते हैं, जिस काल में जबरदस्ती वे विषय–विलासी यवनों की पाशविक वृति की तृप्ति का साधन बना दी जाती है, उसी समय में भगवान! मुझे सुन्दरता की थाली सौंपकर ऐसे देश में भेजना तुझे उचित नहीं था। अच्छा तू जो कुछ करता है वह––––। इस अपने सँवारे हुए फूल के लिए यदि तूने प्रेमी भ्रमर नहीं बनाया है, तो निर्जन वन में खिलकर आप–ही–आप झर जानेवाले फूल की तरह मेरे जीवन–कुसुम को भी अनजान और अछूत ही रहने देकर झर जाने देना; पर इसे किसी कटिल कीट के हवाले हर्गिज न सौंपना।[5]

अरवली की ऊँची–ऊँची चोटियों ने सूरज की लाल–पीली किरणो का मुकुट पहन लिया था। जंगल से गायें भागी चली आती थीं। उनके पीछे–पीछे दो हजार मुगल घुड़सवार उन्हें बेतहाशा खदेड़ते हुए आ रहे थे। औरंगजेब ने रूपनगर के सामान्त–राज प्रभावती के पिता के पास एक पत्र इन्हीं घुड़सवारों के हाथ भेजा था। अपने असीम गौरव से मोहित होने के कारण घोर अहंकार में चूर होकर उसने ललकार पत्र लिखा था। सामन्त–राज उस मदान्ध बादशाह का पत्र पढ़ते ही काँप उठे। राजकुमारी प्रभावती पिता को मौन देख, वह अथाह समुद्र में पड़ गई। उभरी हुई भादों की अपार नदी दूसरे उसमें भारी बोझ से लदी हुई, बिना मलाह की झाँझरी नैया तीसरे तूफानी तरंगों का तांडव नृत्य! बस केवल द्रुपद दुलारी की लाज रखने वाले का भरोसा वह मन–ही–मन सोचती है कि पापी म्लेच्छ–राज की दृष्टि भी न पड़ने दूँगी और राणावंश प्रतापशाली वीर को पत्र लिखती है जो इन पंक्तियों में दर्शाया गया है– ''चितौर–चिंतामणि! मैं राठौर वंश की एक दीन कन्या हूँ। आप राणा वंश के प्रतापशाली वीर, छत्रधारी क्षत्रियों के छत्रपति और मातृभूमि मेवाड़ के यशस्वी भक्त हैं। यदि आपके देखते–ही–देखते छात्र गौरव का नाश हो जाए, राजपूत कन्याओं का लाज और तेजस्वी पूर्वजों के उज्ज्वल यश में धब्बा लग जाए तो इससे बढ़कर और अधिक लज्जा का विषय, आप–सरीखे प्रताप–कुलदीपक के लिए और हो ही क्या सकता है? मैं आपके चरणों के शरण में आई हूँ। मेरी बाँह पकड़कर लाज रखिए। अपनी ओर देखकर मेरी ढ़िठाई क्षमा कीजिए। बीच कीचक के क्रूर हाथों से वीर पांडव भीम और अभिमानी जयद्रथ के पंजों से दुर्द्धर्ष धनुर्धर अर्जुन ने जिस प्रकार अपनी प्यारी द्रौपदी को बचाया था उसी प्रकार आप भी म्लेच्छों के हाथ से इस कुलवती की लाज बचाइएँ।''[6]

'शिवपूजन सहाय' प्रेमचन्द युगीन सहज एवं सुलझे कहानीकार हैं। इनके कहानियों में ऐतिहासिकता की झलक मिलती है। 'शिवपूजन सहाय' पर भारतीय संस्कृति की अमिट छाप है, जो इनके कहानियों में परिलक्षित हुआ है। इनका विषय समाज परिवार बच्चे ग्रामीण परिवेश की झलक मिलती है।[7] इनके कहानियों में गाँव की पगडंडियों, पहाड़ों, जंगलों का पूरा–पूरा वर्णन मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिवपूजन रचनावली (बिहार का विहार' विभूति और 'देहाती दुनिया'), पहला खण्ड, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, कहानी का प्लॉट, पृ. 235.
2. वही, पृ. 126.
3. वही, पृ. 27.
4. वही, पृ. 28.
5. वही, पृ. 29.
6. वही, पृ. 30.
7. वही, पृ. 31.

*****